# दिल्ली उच्च न्यायालय : नई दिल्ली

निर्णय दिया गया: 28.11.2013

## मू.वि.या.377/2011

**वरिष्ठ मंडल वाणिज्यिक प्रबंधक** .....याचिकाकर्ता

बनाम

**मेसर्स श्रीराम खाद्य और उर्वरक उद्योग** .....प्रत्यर्थी

**इस मामले में उपस्थित अधिवक्तागण:**

याचिकाकर्ता के लिए: सुश्री गीतांजलि मोहन, अधिवक्ता
प्रत्यर्थी के लिए: श्री पी. के. भल्ला, अधिवक्ता

**कोरम :-**
**माननीय श्री न्यायमूर्ति राजीव शकधर**

**न्या. राजीव शकधर**

अन्तर्वर्ती आवेदन संख्या 7829/2011 (देरी की माफी)

1. यह देरी की माफी के लिए एक आवेदन है जिसमें हाल ही में मेरे द्वारा दो विस्तृत आदेश पारित किए गए हैं। प्रथम आदेश दिनाँक 05.07.2013 पर और दूसरा आदेश दिनाँक 06.09.2013 पर पारित किया गया था। दोनों अवसरों पर,याचिकाकर्ता (संक्षेप में रेलवे) को शपथपत्र के माध्यम से आवश्यक

दस्तावेजी साक्ष्य द्वारा समर्थित यह समझाने का अवसर दिया गया था कि रेलवे को जारी किए गए अधिनिर्णय की हस्ताक्षरित प्रति कब प्राप्त हुई थी।

2. दिनांकित 06.09.2013 के अंतिम आदेश के अनुसरण में, श्री विक्रम सिंह, जो वर्तमान में वरिष्ठ मंडल वाणिज्यिक प्रबंधक (वरिष्ठ मं.वाणि.प्र.), उत्तर रेलवे, मंडल रेल प्रबंधक कार्यालय, नई दिल्ली के पद पर तैनात हैं,

3. इससे पूर्व, उसी व्यक्ति अर्थात श्री विक्रम सिंह, सीनियर मं.वाणि.प्र. का एक शपथपत्र अभिलेख पर है, जिन्हें दिनाँक 22.10.2012 को शपथ दिलाई गई थी (न कि 20.10.2012 को जैसा कि दिनांकित 05.07.2013 के आदेश में दर्ज है)। इस शपथपत्र के अलावा, श्री आर.सी. धीमान के दो शपथपत्र हैं, जो तब से सेवानिवृत्त हो चुके हैं और प्रासंगिक समय में मुख्य अधिकारी अधीक्षक वाणिज्यिक, (के पद पर) मंडल रेल प्रबंधक कार्यालय, दिल्ली डिवीजन, उत्तर रेलवे, नई दिल्ली (में) थे। उन्होंने दिनांकित 22.11.2012 और 19.07.2013 को शपथपत्र दायर किए हैं।

4. मेरे सामने रखे गए अभिलेख को पढ़ने के पश्चात जो सामने आता है वह इस प्रकार है:-

4.1 निस्संदेह, दिनांकित 13.10.2010/ 03.11.2010 का अधिनिर्णय विद्वान मध्यस्थ द्वारा महाप्रबंधक (महा.प्र.), मुख्यालय (मुख्यालय), वरिष्ट मं.वाणि.प्र.

और प्रत्यर्थी को पंजीकृत डाक द्वारा भेजा गया था, जिसके संबंध में क्रमशः रसीद संख्या 5777, 5779 और 5778 उत्पन्न की गई थी।

4.2 अभिलेख से पता चलता है कि डाक रसीद संख्या 5777 और 5779 महाप्रबंधक, मुख्यालय और वरिष्ठ मं.वाणि.प्र., रेलवे से संबंधित हैं, जबकि अंतिम डाक रसीद संख्या 5778 प्रत्यर्थी से संबंधित है।

4.3 इस बात पर कोई विवाद नहीं है कि अधिनिर्णय की हस्ताक्षरित प्रतियां (जिनमें से प्रत्येक को मूल माना जाता है) उपरोक्त तीन प्राप्तकर्ताओं को दिनाँक 04.11.2010 पर भेजी गई थीं।

4.4 इस तथ्य के संबंध में भी यहाँ कोई विवाद नहीं है कि महा.प्र., मुख्यालय, रेलवे को दिनाँक 08.11.2010 पर अधिनिर्णय की एक हस्ताक्षरित प्रति प्राप्त हुई। इसी तरह, प्रत्यर्थी को, स्वीकार करते हुए, अधिनिर्णय की एक प्रति, दिनाँक 08.11.2010 पर भी प्राप्त हुई।

5. वास्तव में विवाद यह हैः क्या, वरिष्ठ मं.वाणि.प्र., रेलवे ने दिनाँक 08.11.2010 पर अधिनिर्णय की हस्ताक्षरित प्रति प्राप्त की।

6. यह रेलवे का रुख है कि उसे प्रत्यर्थी के माध्यम से दिनाँक 25.11.2010 पर अधिनिर्णय की एक प्रति प्राप्त हुई, और यह कि अधिनिर्णय की हस्ताक्षरित प्रति, जिसे विद्वान मध्यस्थ द्वारा दिनाँक 04.11.2010 पर भेजा गया था, जिसे केवल दिनाँक 04.03.2011 पर वरिष्ठ मं.वाणि.प्र., रेलवे के कार्यालय में प्राप्त

किया गया। इस उद्देश्य के लिए, रेलवे अपने कार्यालय की फाइलों और अपने अधिकारियों के शपतपत्रों की आंतरिक टिप्पणियों पर भरोसा करना चाहता है, जिसमें घटना के होने और शपतपत्रों की तिथियों के मध्य का समय और स्थान दिया गया है।

6.1 रेलवे का यह भी मामला है कि मध्यस्थ के द्वारा अधिनिर्णय की हस्ताक्षरित प्रति को महा.प्र., मुख्यालय से दिनांकित 17/18.01.2011 को व्याख्या पत्र को वरिष्ठ मं.वाणि.प्र. के कार्यालय को भेजा था।

6.2 रेलवे द्वारा उपर्युक्त तथ्य की वकालत की गई है, ताकि यह प्रतिविरोध किया जा सके कि उसके वरिष्ठ मं.वाणि.प्र. (पद) पर सेवा उचित सेवा है क्योंकि उक्त अधिकारी मध्यस्थ के समक्ष मामले का अनुसरण कर रहा था और इसलिए अधिनिर्णय को आक्षेप करने की जिम्मेदारी उस पर थी। यह निवेदन ***भारत संघ बनाम बनाम टेक्को त्रिची इंजीनियर्स एंड कॉन्ट्रैक्टर्स (2005) 4 एस.सी.सी. 239*** के मामले में उच्चतम न्यायालय के निर्णय के भाग पर आधारित है।

6.3 पत्र दिनांकित 17/18.01.2011 के एक अवलोकन मात्र से पता चलता है कि, दिनाँक 14.01.2011 के पत्र पर मुख्य वाणिज्यिक प्रबंधक (मु.वाणि.प्र.) द्वारा पर हस्ताक्षर किए गए हैं। यह नितान्त संभव है कि उक्त पत्र मु.वाणि.प्र. के पास दिनाँक 17/18.01.2011 तक रहा हो, क्योंकि वह तिथि पत्र के दाहिने हाथ के ऊपरी कोने में संलग्न है।

7. जैसा कि मेरे दिनांकित 05.07.2013 आदेश में नोट कर लिया गया है, मध्यस्थता मामले से संबंधित "कागज" को संदर्भित करता है। मेरा मानना है कि इसमें दिनांकित 13.10.2010 / 03.11.2010 के अधिनिर्णय का संदर्भ है। क्योंकि पत्र में उक्त तिथियों का उल्लेख करते हुए शीर्षक अंकित है। इस अनुमान का रेलवे द्वारा स्पष्ट रूप से खंडन नहीं किया गया है।

8. रेलवे, आगे बताता है कि, वरिष्ठ मं.वाणि.प्र. के कार्यालय में (महा.प्र., मुख्यालय के कार्यालय से दिनांकित 17/18.01.2011 व्याख्या पत्र के द्वारा) अधिनिर्णय की एक हस्ताक्षरित प्रति प्राप्त करने के पश्चात, दिनाँक 24.02.2011 पर अधिनिर्णय पर आक्षेप करने का निर्णय लिया गया था।

8.1 परिणामस्वरूप, दिनाँक 18.03.2011 पर, एक अधिवक्ता नामित किया गया था। माध्यस्थम और सुलह अधिनियम, 1996 (संक्षेप में अधिनियम) की धारा 34 के तहत एक याचिका का प्रारूप तैयार किया गया था, और विधिवत जांच के पश्चात, तत्काल याचिका दिनाँक 18.04.2011 पर दायर की गई थी।

9. इन घटनाओं के आधार पर, रेलवे की ओर से पेश होने वाली सुश्री मोहन का कहना है कि अधिनियम की धारा 34 के तहत दायर याचिका, अधिनियम की धारा 34 (3) के विहित समय के अन्दर है।

10. सुश्री मोहन का कहना है कि यद्यपि विद्वान मध्यस्थ द्वारा वरिष्ठ मं.वाणि.प्र. कार्यालय को भेजे गई अधिनिर्णय की हस्ताक्षरित प्रति दिनाँक

04.03.2011 को उस कार्यालय में प्राप्त हुई थी, फिर भी यदि सीमा अवधि 17/18.01.2011 से गिनी जाए, अर्थात वह तिथि जब अधिनिर्णय की हस्ताक्षरित प्रति महा.प्र., मुख्यालय के कार्यालय से वरिष्ठ मं.वाणि.प्र. कार्यालय को भेजी गई थी, तो अधिनियम की धारा 34 के तहत याचिका दायर करना समय के अन्दर होगा।

11. इसके विपरीत, प्रत्यर्थी की ओर से पेश होने वाले श्री भल्ला का कहना है कि अभिलेख इसके विपरीत दर्शाता है। उनका यह निवेदन है कि इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि तीन में से दो प्राप्तकर्ताओं ने विद्वान मध्यस्थ द्वारा भेजे गए अधिनिर्णय की हस्ताक्षरित प्रति दिनाँक 08.11.2010 को प्राप्त की थी, तब संभावनाओं के संतुलन पर, जब तक कि इसके विपरीत साक्ष्य न हों, यह मानना होगा कि वरिष्ठ मं.वाणि.प्र. के कार्यालय ने डाक रसीद संख्या 5779 के माध्यम से 08.11.2010 को अधिनिर्णय की हस्ताक्षरित प्रति प्राप्त की थी।

11.1 अपने निवेदनों को पुष्ट करने के लिए, वह डाक अधिकारियों द्वारा जारी प्रमाण पत्र पर विश्वास करता है, जो इस प्रकार है:-

> ***"...रजिस्ट्रीकृत पत्र नं.5779 इस कार्यालय अभिलेख के अनुसार प्राप्तकर्ता को दिनांकित 08.11.2010 पर वितरित किया गया था। प्रासंगिक अभिलेख की प्रतिलिपि नीचे संलग्न है।..."***

12. श्री भल्ला का प्रतिविरोध है कि यह रेलवे का निवेदन नहीं है, जैसा कि यह नहीं हो सकता है कि पत्र व्यवहार वरिष्ठ मं.वाणि.प्र. को संबोधित नहीं किया गया था।

13. अपनी बात को मजबूती प्रदान करने के लिए श्री भल्ला ने मेरे संज्ञान में रेलवे द्वारा जारी दिनांकित 02.11.2011 के पत्र की प्रतिलिपि भी लाई, जो दिनाँक 30.09.2011 को दायर एक सूचना के अधिकार के आवेदन पर आधारित है; जिससे ऐसा लगता है कि वरिष्ठ मं.वाणि.प्र. को दिनाँक 19.01.2011 को अधिनिर्णय की हस्ताक्षरित प्रति प्राप्त हुई। उनका यह भी प्रतिविरोध है कि श्री विक्रम सिंह, वरिष्ठ मं.वाणि.प्र., जिन्होंने दिनांकित 22.10.2012 को शपथ-पत्र दिया है, वास्तव में दिनाँक 09.05.2012 को वरिष्ठ मं.वाणि.प्र. के कार्यालय में सेवाभार ग्रहण किया था।

13.1 दुर्भाग्य से, इन पत्रों को औपचारिक रूप से एक शपथपत्र के समर्थन से न्यायालय में दायर नहीं किया गया है, और इसलिए, रेलवे को इन संचारों की सत्यता को परीक्षित करने का कोई अवसर नहीं मिला है।

14. फिर भी, श्री भल्ला का कहना है कि यदि केवल डाक रसीदों के मुकाबले में उनके प्रतिविरोध पर विचार किया जाए, तब भी, अधिनियम की धारा 34 के तहत याचिका की स्थापना समयबद्ध है, क्योंकि यह अधिनियम की धारा 34 (3) के तहत निर्धारित अवधि से परे है।

15. इसलिए, श्री भल्ला का प्रतिविरोध है कि इस न्यायालय के पास अधिनियम की धारा 34(3) में अनुबंधित 3 माह और 30 दिनों की अवधि से अधिक की सीमा को माफ करने की कोई शक्ति नहीं है। यह श्री भल्ला का कहना है कि 30 दिनों की छूट भी तभी उपलब्ध कराई जा सकती है जब केवल रेलवे, किसी मामले में, अधिनियम की धारा 34(3) के तहत प्रदान की गई 3 माह की अवधि से अधिक की देरी को माफ करने के लिए "पर्याप्त कारण" दिखाने में समर्थ हो।

16. मैंने पक्षकारों के विद्वान अधिवक्ता को सुना है। जैसा कि पहले संकेत दिया गया है, इस मामले पर पिछली दो तिथियों पर विस्तार से विचार-विमर्श किया गया है। प्रत्येक अवसर पर मेरी टिप्पणियों को विस्तार से दर्ज किया गया है। जैसा कि ऊपर बताया गया है, रेलवे द्वारा दिए गए स्पष्टीकरण में कई खामियां हैं। इस बारे में कोई ठोस स्पष्टीकरण नहीं दिया गया है कि अधिनिर्णय की हस्ताक्षरित प्रति, जो दिनाँक 08.11.2010 पर महा.प्र., मुख्यालय के कार्यालय में प्राप्त हुई थी, को दिनाँक 17/18.01.2011 तक वरिष्ठ मं.वाणि.प्र. के कार्यालय में क्यों नहीं भेजा गया था। इस तथ्य के अलावा कि कुछ अधिकारियों के विरुद्ध विभागीय कार्यवाही शुरू की गई है, और वह भी इस न्यायालय द्वारा खामियों को इंगित करने के पश्चात, देरी के कारणों का वर्णन नहीं किया गया है।

16.1 रेलवे उन दस्तावेजों को दिखाने में असमर्थ रहा है, जिसमें महा.प्र., मुख्यालय के कार्यालय में अधिनिर्णय की हस्ताक्षरित प्रति की आंतरिक प्राप्ति दर्ज की गई थी। यदि यह डाक रसीद के लिए नहीं होता, तो संभवतः इस तथ्य को स्वीकार नहीं किया जाता।

16.2 फिर भी, अभिलेख से पता चलता है कि महा.प्र., मुख्यालय के कार्यालय में प्राप्त अधिनिर्णय की हस्ताक्षरित प्रति मु.वाणि.प्र. के कार्यालय को प्रेषित की गई थी। अगर पहले नहीं है तो जाहिर है कि दिनाँक 14.01.2011 पर उनके पास रखा था। यहाँ पुनः से रेलवे द्वारा अभिलेख पर कुछ भी नहीं रखा गया है जो जी.एम., मुख्यालय के कार्यालय से मु.वाणि.प्र. के कार्यालय तक आवाजाही को प्रदर्शित करेगा। कागजों की श्रृंखला पूरी तरह से गायब है। जैसा कि ऊपर बताया गया है, दिनांकित 17/18.01.2011 के पत्र पर वास्तव में मु.वाणि.प्र. द्वारा दिनाँक 14.01.2011 को हस्ताक्षर किए गए थे।

16.3 दिनांकित 17/18.01.2011 पत्र इस कारण से बहुत अधिक विश्वास को प्रेरित नहीं करता है कि इसमें एक विषय संदर्भ है, जो इस प्रकार हैः- "पत्र सं।2006/मध्यस्थता/2 दिनांकित 13.10.2010/03.11.2010"। उक्त पत्र के जवाब में मु.वाणि.प्र. ने एक "पेपर" भेजा है। जबकि यह निश्चित रूप से नहीं कहा जा सकता है कि "पेपर", उस अधिनिर्णय की हस्ताक्षरित प्रति है जिसे उनके कार्यालय ने कथित रूप से महा.प्र., मुख्यालय के कार्यालय से प्राप्त किया

और वरिष्ठ मु.वाणि.प्र. को प्रेषित किया, मैंने रेलवे को संदेह का लाभ देने का निर्णय किया है, जैसा कि ऊपर बताया गया है।

16.4 हो सकता है कि इसने रेलवे को सीमा के आधार पर गैर-उपयुक्त होने से बचाया हो, लेकिन इस तथ्य के लिए कि अभिलेख में ऐसे साक्ष्य हैं जो इस सिद्धांत को आगे बढ़ाते हैं कि वरिष्ठ मु.वाणि.प्र. को दो अलग-अलग तिथियों पर दो स्रोतों से अधिनिर्णय की हस्ताक्षरित प्रति प्राप्त हुई; जिनमें से प्रत्येक को ध्यान में रखने पर अधिनियम की धारा 34 के तहत दायर याचिका को सीमा के अन्दर लाया जाएगा।

16.5 पहला स्रोत महा.प्र., मुख्यालय का कार्यालय है। दूसरा स्रोत विद्वान मध्यस्थ है।

16.6 पहला स्रोत मु.वाणि.प्र. के दिनांकित 17/18.01.2011 पत्र पर निर्भर है। दूसरा स्रोत विद्वान मध्यस्थ द्वारा किए गए प्रेषण पर निर्भर है, जहाँ तक की दिनांक 04.11.2010 से है। ऊपर बताए गए कारण के लिए, जो साक्ष्य पहले स्रोत के रूप में प्रस्तुत किए गए हैं, वे विश्वास को प्रेरित नहीं करते हैं, हालाँकि मैंने रेलवे को संदेह का फायदा दिया है। यदि हालाँकि, मैं इस निष्कर्ष पर पहुंच पाता हूं कि जहां तक दूसरे स्रोत का संबंध है, निर्णय की हस्ताक्षरित प्रति बहुत पहले प्राप्त हुई थी, अर्थात दिनाँक 08.11.2010 को, न कि दिनाँक 04.03.2011 को, जैसा कि दावा किया गया है, तो पहले स्रोत के संबंध में संदेह का लाभ दिए जाने से रेलवे को कोई मदद नहीं मिलेगी।

16.7 इसलिए, जो देखा जाना चाहिए वह प्रेषण के दूसरे स्रोत के रूप में अभिलेख पर मौजूद साक्ष्य है, जो मध्यस्थ स्वयं है।

16.8 जहां तक दूसरे स्रोत का प्रश्न है, प्रत्यर्थी के मामले को पुख्ता करने वाली बात रेलवे द्वारा दायर किए गए निर्णय की प्रति पर की गई टिप्पणी है, जिसमें धारा 34 याचिका और उस संबंध में जारी डाक प्रमाण पत्र शामिल है।

16.9 इन दोनों दस्तावेजों को मेरे दिनांकित 06.09.2013 के आदेश में संदर्भित किया गया था। तब से रेलवे द्वारा ऐसा कुछ भी अभिलेख में नहीं लाया गया है जो अभिलेख में उपलब्ध उक्त सामग्री के साक्ष्य मूल्य पर संदेह पैदा करे।

17 जैसा कि मेरे दिनाँक 06.09.2013 के आदेश में उल्लेख किया गया है; अधिनियम की धारा 34 के तहत याचिका के साथ दायर किए गए अधिनिर्णय की प्रति, निम्नलिखित प्रभाव को दर्शाती है:-

> "आर-5779/एस. आर. डी.सी.एम. एंड रिसीव्ड 8/11 (एस.आई.सी. एस-8/11)"

17.1 श्री मोहन ने इस स्थिति का सत्यापन किया है कि क्या वरिष्ठ मु.वाणि.प्र. के कार्यालय में प्राप्त मूल अधिनिर्णय (जिसे विद्वान मध्यस्थ द्वारा भेजा गया था) में उक्त टिप्पणी है। सुश्री मोहन ने उक्त स्थिति की पुष्टि की है।

17.2 इसके अलावा, जैसा कि ऊपर बताया गया है, डाक रसीद इस तथ्य का समर्थन करती है। डाक रसीद का एक उद्धरण ऊपर पैराग्राफ 11.1 में दिया गया है।

17.3 अभिलेख पर उपरोक्त साक्ष्य, अर्थात् डाक रसीद और डाक प्रमाण पत्र, जिनमें से कोई भी मेरे समक्ष चुनौती में नहीं है, के साथ, भारतीय साक्ष्य अधिनियम, 1872 (संक्षेप में भा.सा. अधिनियम) की धारा 114 दृष्टान्त (च) के साथ पठित सामान्य खंड अधिनियम, 1897 (संक्षेप में स.खं. अधिनियम) की धारा 27 के तहत वरिष्ठ डी.सी.एम. को अधिनिर्णय की हस्ताक्षरित प्रति की सेवा का अनुमान सुरक्षित रूप से तैयार किया जा सकता है।

17.4 एक बार जब यह दिखाया जाता है कि विरोधी पक्षकार को दिए जाने वाले दस्तावेज़ को उचित तरीके से संबोधित करके, पूर्व-भुगतान करके और पंजीकृत डाक द्वारा उक्त पक्षकार यानी प्राप्तकर्ता को भेज दिया गया था, तो भारतीय साक्ष्य अधिनियम की धारा 114 दृष्टांत (च) के साथ पठित स.खं. अधिनियम की धारा 27 के तहत उचित सेवा प्रदान की गई धारणा है [***हरचरण सिंह बनाम श्रीमती शिवरानी और अन्य, (1981) 2 एस.सी.सी. 535 में*** देंखे ]। इसका अपवाद शायद यह होगा कि अगर रेलवे इस मामले में यह प्रदर्शित करने के लिए विश्वसनीय सामग्री अभिलेख पर लाता कि कानूनी रूप से सेवा की धारणा मान्य नहीं है। ऐसी स्थिति में, जिम्मेदारी प्रत्यर्थी पर वापस स्थानांतरित हो गई होगी जो दावा करता है कि अधिनिर्णय की हस्ताक्षरित प्रति की सेवा वरिष्ठ मु.वाणि.प्र. को दिनाँक 08.11.2010 पर दी गई थी। वर्तमान मामले के तथ्यों में ऐसी कोई विश्वसनीय सामग्री अभिलेख पर नहीं लाई गई है।

18. इन परिस्थितियों में, मेरे विचार में, परिसीमन केवल दिनाँक 08.11.2010 से शुरू हो सकता है, भले ही यह माना जाए कि वरिष्ठ मु.वाणि.प्र. वह व्यक्ति था, जिसे अधिनिर्णय की एक हस्ताक्षरित प्रति प्रदान की जानी थी क्योंकि उसे निर्णय लेने की जिम्मेदारी सौंपी गई थी, कि क्या अधिनियम की धारा 34 के तहत एक याचिका दायर की जानी थी या नहीं। यदि उस तिथि को ध्यान में रखा जाता है, तो यह एक स्वीकृत स्थिति है कि याचिका की स्थापना अधिनियम की धारा 34(3) के तहत प्रदान की गई 3 माह और 30 दिनों की अवधि से परे है।

19. निष्कर्ष से पूर्व, मुझे इस बात पर ध्यान देंना चाहिए कि सुश्री मोहन ने मामले के गुणागुण पर यद्यपि क्षणिक रूप से बहुत बात करने का प्रयास किया, है। इस प्रयास को मेरे द्वारा एक ही कारण से विफल कर दिया गया था, जो है, जब परिसीमन के मुद्दे की जांच करते समय गुणागुण पर कोई भी चर्चा केवल बहस को अस्पष्ट कर सकती है। रोक का हस्तक्षेप उपचार को रोकता है। यह पक्षकारों के अधिकारों पर कोई प्रतिबिंब नहीं डालता है, यही कारण है कि इसे अक्सर शांति का कानून के रूप में संदर्भित किया जाता है। निश्चित रूप से, न्यायालय के समक्ष उस देरी को माफ करने की कोई शक्ति नहीं है जहां प्रारंभिक फाईल करना अधिनियम की धारा 34 (3) के अंदर निर्धारित अवधि से अधिक है। [***भारत संघ बनाम पौपुलर कंस्ट्रक्शन कं. (2001) 8 एस. सी. सी. 470*** देखें।] तदनुसार, आवेदन खारिज कर दिया जाता है।

<u>मू.वि.या.377/2011</u>

20. अंतर.आ.7829/2011 में पारित आदेश को देखते हुए, शीर्षक वाली याचिका को खारिज करना होगा। इसे तदनुसार आदेशित किया जाता है।

**न्या. राजीव शकधर**

**नवंबर 28, 2013**
**वाईजी**

***(Translation has been done through AI Tool: SUVAS)***

***अस्वीकरण :*** *देशी भाषा में निर्णय का अनुवाद मुकद्दमेबाज़ के सीमित प्रयोग हेतु किया गया है ताकि वो अपनी भाषा में इसे समझ सकें एवं यह किसी अन्य प्रयोजन हेतु प्रयोग नहीं किया जाएगा| समस्त कार्यालयी एवं व्यावहारिक प्रयोजनों हेतु निर्णय का अंग्रेज़ी स्वरूप ही अभिप्रमाणित माना जाएगा और कार्यान्वयन तथा लागू किए जाने हेतु उसे ही वरीयता दी जाएगी।*